अनसुनी कविताएँ

जो दिल ने कहा, पर दुनिया ने नहीं सुना

बलराम सिंह भाटी

BlueRose ONE.com
Stories Matter
NewDelhi • London

BLUEROSE PUBLISHERS
India | U.K.

Copyright © Balram Singh Bhati 2025

All rights reserved by author. No part of this publication may be reproduced, stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means, electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the prior permission of the author. Although every precaution has been taken to verify the accuracy of the information contained herein, the publisher assumes no responsibility for any errors or omissions. No liability is assumed for damages that may result from the use of information contained within.

BlueRose Publishers takes no responsibility for any damages, losses, or liabilities that may arise from the use or misuse of the information, products, or services provided in this publication.

BlueRoseONE.com
Stories Matter
NewDelhi • London

For permissions requests or inquiries regarding this publication,
please contact:

BLUEROSE PUBLISHERS
www.BlueRoseONE.com
info@bluerosepublishers.com
+91 8882 898 898
+4407342408967

ISBN: 978-93-7310-873-5

Cover Design: Shubham Verma
Typesetting: Sagar

First Edition: September 2025

अनुक्रमाणिका

1. प्रस्तावना 1
2. तेरा बसेरा 3
3. क्षण-भंगुर जीवन 5
4. काल-चिठ्ठी 7
5. बेटी की अभिलाषा 8
6. पुरातन युग 9
7. नव-वर्ष 11
8. सुबह की सैर 13
9. भ्रमजाल 14
10. नीर 15
11. नहीं चाहिए मोक्ष 18
12. ऋतुमाला 22
13. टूटे सपने 28
14. आलंब 30
15. चांद की अठखेलिया 32
16. मैं खोज लेता हूँ। 40
17. कौन! 41
18. रामनाम 43
19. हट की हठ 45

20. क्षणिकाएँ 47
21. यदि पूछ लिया होता 50
22. चुभते बोल 51
23. फूल 52
24. प्रतिशोध 53
25. बारिश की बूंद 54
26. गंगा-घाट 56
27. भागमभाग जिंदगी 61
28. भूल 63
29. सुप्रभातम 64
30. मै जागू तुम सो जाओ 68
31. मन का अंधियारा 70

प्रस्तावना

“शब्द जब संवेदना से जन्म लेते हैं, तो केवल कविता नहीं बनते — वे समाज का दर्पण बनते हैं।”

“अनसुनी कविताएँ” — यह मेरा नवीनतम काव्य-संग्रह उन भावनाओं, परिस्थितियों और पीड़ाओं की अभिव्यक्ति है, जिन्हें समाज अक्सर अनदेखा और अनसुना कर देता है। इन कविताओं के माध्यम से मैंने प्रयास किया है कि उन आवाज़ों को स्वर दूँ जो हमेशा से हमारे बीच थीं, लेकिन जिन्हें हमने सुनने का समय या साहस नहीं जुटाया।

यह संग्रह सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध मेरी लेखनी की प्रतिक्रिया है —

कभी वृद्धाश्रमों में उपेक्षा झेलते माँ-बाप के रूप में,

तो कभी दहेज के लोभ में झुलसती बेटियों की चीत्कार में।

इसी में जीवन-मरण के प्रश्न, आत्मसंघर्ष, प्रकृति की मौन भाषा, और मानवीय करुणा के स्वर भी गुंथे हुए हैं।

इससे पूर्व “अनजानी कविताएँ” , “महाभारत के पल” और “समुद्र-मंथन” जैसी रचनाओं के माध्यम से मैं पाठकों के मन तक पहुँचने का प्रयास करता रहा हूँ। परंतु “अनसुनी कविताएँ” मेरे हृदय के और भी निकट है — क्योंकि इसमें समाज की अनदेखी गहराइयों से उठती टीस है, एक आह है जो शब्द बनकर बाहर आई है।

मेरी कोशिश यही रही है कि कविता सिर्फ कोमल भावनाओं का माध्यम न बने, बल्कि वह-वह चिंगारी भी हो, जो सोच को झकझोरे, सवाल उठाए और अंततः एक जागरूक आत्मसंवाद का मार्ग प्रशस्त करे।

अगर मेरी कोई कविता किसी पाठक को एक क्षण के लिए भी सोचने पर विवश कर सके — तो मेरा यह प्रयास सफल माना जाएगा।

तेरा बसेरा

ये बगिया न होगी, न आंगन ये तेरा!
जहाँ जा रहे हो, वहाँ कुछ भी न तेरा।
साथ न जाए तेरे, तू यत्न कितने ही कर ले।
अगर विश्वास नहीं, कितनी ही मौत मर ले।
सब रह जाना हैं बंदे! इसी धरा पर।
फिर काहे का लालच, न व्यर्थ मरा कर॥

ये हवा, ये पानी, ये सुंदर सरोवर!
ये फूलों के चमन, महकते ये आंगन।
सब छूट जाएँगे, जब मरण तेरा होगा।
तन से आत्मा का..जब विच्छेदन होगा।
कर्मों का फल बने फिर सौभाग्य तेरा।
जहाँ जा रहें हो, वहाँ यम न्यायधीश तेरा॥

कर्म तेरे ही परलोक में साथी रहेंगे।
पाप-पुण्य ही तेरे लिए उत्तरदायी रहेंगे।
मत पाप कर, न सता कभी किसी को।
दूर कर, छल-कपट, व्यसन, दुराचारिता को।
कर्म अच्छे रखो, देखो फिर सफल जीवन तेरा।
उसपर सबका हिसाब हैं..वह न अंधा न बहरा॥

आया हैं तू धरा पर, अपना किरदार लेकर।
चार पल की पटकथा में, अभिनय की छाप देकर-
कर कुछ ऐसा कि सब रोये तेरे जाने पर।
वर्षों याद करें पुश्तें, तुझे श्रद्धांजली देकर।
जीवन में प्यारे! ईश्वर-प्रिय काज करा कर।
फिर तुझसे उत्तम प्राणी, कोई नहीं इस धरा पर॥

क्षण-भंगुर जीवन

जा रहा था किसी अनजाने पथ,
बेसुध बेपरवाह मैं पगला।
समीप सरोवर, नजर पड़ी तो
देखा, मछली पकड़े एक बगुला।

मेरे उत्सुक नयन ठिठक गये, जब
मैंने देखा, दो जीवों की आँखों को।
मीन नयन मिटने ही वाला है..
देकर सुख बगुला आँखों को।

दो आँख हंसी, दो आँख रोई!
बगुला-क्षुदा मिटा, मीन रोई।
दृश्य बड़ा यह पीड़ादायक।
बगुला बना मीन का संहारक।

ओझिल आँख अब होने लगी।
वैतरणी बनी बगुला आहार नली।
दम घूंटने लगा, अब जान निकली
मीन मरी, उफ्फ तक न निकली।

देखो! कैसा यह जीवन चक्र!
मैंने निज आँखों से देखा कालचक्र।
प्रभु दृष्टि मीन पर थी अति वक्र!
बगुला भगत को भक्ति का फक्र।

रख जीवन में सब्र, पाया उसने कर्मफल।
होते वो सफल, जिनके इरादे अटल।
घटना थी यह अति हृदय विदारक।
परंतु पाठक के लिए यह श्रेष्ठ सबक।

काल-चिठ्ठी

धीरे-धीरे उम्र बढ़ रही है…
कोई लिख चुका है चिठ्ठी।
भज ले प्यारे नाम प्रभु का
तू काम से लेकर छुट्टी।

इस चिठ्ठी पर पता है तेरा
जो देती तुझे बुलावा।
चार दिन की चाँदनी…
दुनिया है एक छलावा।

दौड़-धूप से थका सा लगता
नीरस बना जीवन अब तेरा।
सुख को ढूंढ-ढूंढ कर थक गया
पर सुख-चैन हुआ नहीं तेरा।

जोड़ ले नाता हे! नादान प्रभु से
चल लिख दे प्रेमभक्ति की चिठ्ठी।
दो दिनों की कहानी प्यारे-तुझे
पता नहीं, कब मिटकर बन जाए मिट्टी।

बेटी की अभिलाषा

नही ब्याहना उस घर बापू
जहाँ मिले न ननद कोई!
न ब्याहना मुझको उस घर
बेटी जन्म पर पीटे छाती कोई!
बेटा जन्मे, जश्न करें, जो
खुशी मनाए सौ-सौ बार!
जन्म बेटी का लगे बोझ सा
जो बेटी से करे कटु व्यवहार!
नही ब्याहना बापू मेरे, जिस घर
दहेज रुपी दानव करे पुकार!
झूठ-फरेब लालच व लालसा
से भरे हो जिनके आचार-विचार!
संस्कार का अभाव जहाँ हो-
मत ब्याहना मुझे बापू वहाँ!
मुझे अपने घर के एक कोने
जगह दे देना, साध्वी बन मरु वहाँ!
विनती मेरी बस इतनी सुन लेना
यदि करते हो मेरा विवाह!
ब्याहना संस्कारी घर मुझको..
हे! बापू! जहां न कि जाऊं मैं स्वाह!

पुरातन युग

गुस्से में सिँहराज हैं,
तमतमाया गजराज!
पुरातन विश्व श्रेष्ठ था,
दुष्कर आधुनिक युग आज।

हानि नही अरण्य को,
थे हरे-भरे खलिहान!
रोज दावानल भेजता,
आज का स्वाधीन इंसान!

गगनचुंबी इमारत की
रखता हैं ये रोज नींव!
पीपल, बरगद, आम
सहित काटे जामुन-नीम!

धरती का आंचल ये चीरे,
कई फुट करे खदान!
सरीसृप काल के गाल समाए,
कारण ये इंसान!

सोचो प्रकृति को हानि
देकर कब तक रह पाएँगे!
ऐसे ही आचरण-वश
घर-घर नए रोग आऐंगे।

पहाड़ कराहते व बिलखते,
काट रहे वक्ष-स्थल!
कब रूकोगे! कब समझोगे!
सँभलो हे! मानव-वत्सल!

ऋतुएँ बदल रही हैं,
देखो फिर भी हैं अनजान!
विषम चुंबकीय-क्षेत्र कारण,
रोज आते आंधी-तुफान!

पिघल रहें ग्लेशियर,
नित आती हैं अब बाढ!
संभल जा रे! मानव अब-
भी न तो जीवन हैं बर्बाद!

नव-वर्ष

नया साल हैं आया देखो
लेकर नयी-२ आशाएँ।
पूरे होंगे काम शेष जो-
दूर भागेंगी निराशाएँ।

मांगा मैंने साथ अपनों का
इसमें मुझे सुख दिखता हैं।
धन दौलत सुख वैभव सारे-
मिथ्या, इनसे दुख ही मिलता हैं।

इच्छा छोटी, अपनापन ज्यादा
देखो जीवन सचमुच फलता हैं।
सुबह सुहानी, दिवस निरामय
शाम को सुख निज घर सोता हैं।

नव-वर्ष की प्रथम तिथि हैं!
आओं! कुछ संकल्प ले!
छोड़े हम बुरी आदतें-
सर्वहित का कोई विकल्प लें।

मैंने ठानी आज त्यागूंगा
जो भी मुझमें हैं कमी!
रखू ध्यान पर्यावरण का-
स्वर्ग बने फिर ये जमीं।

लो संकल्प मानव तुम अब तो
क्यू इतने निर्मोही तुम!
परोपकारी कर्तव्य-परायण
सच्चे नागरिक बनो तुम!

सुबह की सैर

चला टहलने भोर सुहानी
हल्की बौछार अंबर में बादल!
स्ट्रीट लाइट की रोशनी फैली
काली सड़क से पाने काजल!
छनकर दीप्ति पड़ रही धरा पर
मानो माँ सहलाती अपना बालक!
पौ फटी केसरिया चोला पहने
उदित होने को हैं जग-पालक।
दृश्य सुहाना..प्रश्न एक हैं?
हम अब तक क्यू सोये हैं!
उठना होगा! जागो नींद से
सब तुम्हें जगाने आए हैं।

भ्रमजाल

गिरा गीरि से..गिरिवन में
वह गर्वीला ग्वाला था गिरनेवाला!
गीर गाय को था गया चराने
गिर गया गलत पथ चलनेवाला।
पानी में गिरा छपाक आवाज आई
जागा मगर जो अलसाया!
संभाल लिया अपने को उसने
चढ बैठ वृक्ष पर फिर इतराया।
पल में प्राण पखेरू होते
पल में जीवन नवजीवन पाता!
मानव अहम त्याग नही सकता
इस कारण ही दुख पाता!
सब खोये रहते, मोह-माया में
जीवन भ्रमजाल बन अँगड़ाता!
बात समझ में तब आती-
जब अंत समय समीप आता!

नीर

एक नीर जीव आँखों में बसता ।
एक नीर नदी में कल-कल बहता॥
नील-गगन के नीचे निर्मल नीर-
श्वेत-हिम बन हिमालय रचता॥

नीर की कीमत पपीहा जाने-
वर्ष-भर बिन नीर वह रहता।
मिलेंगी बूँद प्रथम बारिश की-
नील-गगन वह अविरत तकता।

नीर से गहरा नाता है जीवन का!
नीर बिन कभी न जीवन पलता।
बीज कभी न उपजे धरा-घट से
नीर-पान यदि उसे नहीं मिलता।

पंचतत्व से निर्मित नर-तन है!
जल-तत्व है इनमें से एक।
बिन नीर के जीवन नहीं टिकता-
नीर त्याग कर, चार पल तो देख।

नदी-सरोवर-झरने, सात-समंदर!
बर्फ से ढके सारे पर्वत नर देख।
सब एक दिन विलुप्त हो जाएंगे!
रे! नर···स्व-आकलन कर देख।

पिघल रहें हैं विशाल ग्लेशियर!
ऊष्मा-उत्सर्जन की दर को देख।
नष्ट हो रही ओजोन-परत निशदिन-
धरती का बढ़ता ताप अब देख।

जल-प्रलय को लाने वाला!
अपने को आधुनिक कहने वाला।
जीवन को समापन तक लाने वाला!
एक तू ही हैं, पर कहाँ मानने वाला?

विकास की प्यास में भटक गया तू!
अपने हित-वश जीवन गटक रहा तू।
जल-प्रलय से डूबेंगी यह धरती!
पैर कहाँ फिर रख पाएगा नर तू।

हवा में विष को घोलने वाले!
प्रदूषण के कारखाने खोलने वाले।
विकास के पथ पर चलने की होड़ में
तुम ही हो..जीवन का गला घोटने वाले।

अब भी समय है, मेरी बात सुन ले तू!
आ लौट ले पुरातन जीवन में नर तू।
प्रकृति स्वयं अपना उपचार करेगी।
तेरे जीवन हेतु फिर से हुंकार भरेगी।

न मिटेगी रे! नर कभी हस्ती तेरी!
सदैव खुशहाल रहेगी बस्ती तेरी।
जीवन सरस सरल यदि रहेगा तेरा!
हरा-भरा रहेगा सदा आंगन नर तेरा।

नहीं चाहिए मोक्ष

नहीं चाहिए मुझे मोक्ष कदाचित
जन्मू बारंबार इसी धरा पर।
अति मनभावन प्रभु तेरी धरती!
मुझे निरंतर यहाँ भेजा कर।

अति रमणीय तेरे नदी सरोवर
झरनें, नदियां और सात समुंदर।
रंग-बिरंगे सुमन खिले उपवन में-
लगते है मुझको अति मनोहर।

मेरे मन की एक यही कामना!
जीवन जीऊँ भारत-भूमि के बीच।
रहूँ सनातनी हर जन्म में मेरे प्रभु!
परहित काज, सदैव करूँ निर्भीक।

करूँ मैं सेवा सदा गौ-वंश की!
प्रकृति से करूँ असीम अनुराग।
चहके चिड़िया डाल-डाल पर-
हरे-भरे लहलहाते आम के बाग।

एक सरोवर समीप सदन के
छोटा चमन···आंगन के पास।
हर पल सुखमय जीवन सबका
कोई सदस्य न रहे कभी उदास।

करे परिश्रम दिन-प्रतिदिन हम
करे प्रगति हो सबका उत्थान।
बहे प्रेम की गंगा ह्रदयों के बीच-
भारत जन-जन रहे खुशहाल।

खेत हरे-भरे, चहु ओर हरियाली-
चहके चिड़िया उपवन की डाली।
पशु विचरते फिरते खलिहानों में-
बहे शीत-पवन अति मतवाली।

बोलो प्रभु! कैसे यह सब तजूं?
मुझको ये सब लगता रमणीक।
अति मनभावन प्रभु तेरी रचना!
मुझे यहां रहने का दे आशीष।

मैं तेरा हूँ! प्रभु भोला बालक!
मुझ पर हे!नाथ इतनी कृपा कर।
बैकुंठ-मिलन मेरा हो जब तुझसे-
पुनः धरा पर मनुष्य-रूप में भेजा कर।

मानव-जीवन है एक कथा अनोखी!
पढ़ना चाहता हूँ मैं इसके हर पाठ।
बचपन सलोना, अल्हड़ जवानी और
लड़खड़ाती वृद्धावस्था का करूँ आभास।

बचपन मेरा ऊषा-किरण सा,
रवि-रश्मियां जैसे चमकती है।
नटखट अलि मँडराए पुष्प पर-
जब कली पुष्प बन खिलती है!

मन में रहे नहीं कोई कामना!
बचपन हैं एक निष्काम आराधना।
नहीं यह करे फल की कामना!
ईश्वर प्रिय है यह बाल-साधना।

जन्मूं अयोध्या या मथुरा में!
बचपन राम-कृष्ण सा मेरा हो।
सरयू किनारे खेलूँ मित्रों संग-
कालिंदी-तट प्रभु मेरा डेरा हो!

डाँट मिले मैया से मुझको!
माखन चुराना मेरा पेशा हो!
मटकी तोड़ूँ गोपियों की!
ऊंची कदंब डाल चढ़ बैठा हो।

मिले सखा मुझको भी ऐसा!
जो मेरे हिस्से का खाना खाएँ!
बाल-सखा वो सुदामा सा मेरा
परम-मित्र बन जग में छाएँ।

भौंरा निकला चमन भ्रमण पर..
पाने को सुमन मकरंद रसीला।
खोज रहा है मिले रस अमृत सा-
बैठ पुष्प के अंतर में, वह गर्वीला।

राग सुनाता···सुमन इठलाता
कपाट पंखुडियों के खुलवाता।
पराग लिपट भ्रमर तन देखो-
पर सुमन नवजीवन फल पाता।

पाकर मधु, देखो! भ्रमर इतराता!
कर्म······सदैव ही प्रतिफल पाता।
मेहनत का गुंजन भ्रमर को भाता।
तभी सुमन से वह अमृत-रस पाता।

बोलो प्रभु मैं मोक्ष क्यू पाऊं?
मैं तन तज कर न ऊपर जाऊं!
रहने दो मुझे यही पावन धरा पर।
मुझ अबोध पर थोड़ी दया कर।

आना जाना है जग का मेला।
मानव फिरता यहां अति बैचेन।
जीवन-मरण है अनोखी परीक्षा
मिले असफलता, पाऊं मैं चैन।

ऋतुमाला

आया चैत्र, लिए नव-चेतना
हृदय को लगे आनंद़-शाली।
किसान भी खुश, रबी फसल-
अब देखो! है पकने वाली!

नीला अंबर, धवल चाँदनी,
धरा पर समीर बहे मतवाली।
न गर्मी है, न सर्दी है, जग में-
छायी चतुर्दिक खुशहाली।

आया बैसाख, बौरों से लथपथ
हर चमन में आमों की डाली।
गेंहू कटे, किसान अति हर्षित
यह मास बना अति वैभवशाली।

समृद्धि का यह मास निराला,
संग अपने लाया है नयी उमंग।
बजती शहनाइयाँ, शादियां होती-
जोड़े करते, नवजीवन अनुबंध।

रवि कोप से पीड़ित धरा सुंदरी!
सृष्टि अब अधिक घबराई सी।
ताल, सरोवर, झरने सब सूखे,
नदियाँ तनिक अकुलाई सी।

सूखी दूब, सूख गये पौधे,
वनस्पतियाँ कुम्हलाई सी।
ज्येष्ठ मास यह कुटिल घना है,
धरा पर प्रलय सी छायी थी।

एक पल जो दुख का,
अगला निश्चय ही सुख का।
जीवन-चक्र न कभी-
सदा एक सा चलता।

संघर्ष ही मात्र जीवन है, रे नर!
फिर क्यू इतनी तू चिंता करता?
ईश्वर है करुणा के सागर!
उनके बिन एक पत्ता न हिलता।

हुआ घनघोर गर्जन अंबर में!
तपित-मही पर न अब हरियाली है।
होने को है विदाई कुटिल ज्येष्ठ की,
आषाढ़ की बारात जो आने वाली है।

मुरझाए पीले पत्तों पर फिर से
एक नयी आशा की किरण जगी।
सूखें पड़े नदी व दरिया, ताल-सरोवरों
ने भी पुनर्जीवन को हुंकार भरी।

रवि-कोप से ग्रसित धरा का-
आशा है, अंतर अब शीतल होगा।
वन के बीच जीव-जंतु की प्यास
मिटेगी..कितना सुखकर दिन होगा।

चातक मुख में बूंद गिरेगी..
सफल तपस्या उसकी होगी।
प्रकृति को मिले एक सहारा-
जग में अब हरियाली होगी।

इंद्र-धनुष दिखे दूर-क्षितिज में-
मानो वर्षा-कुमारी का लहराए आंचल।
सप्तरंगी परिधान लिए, प्रेम बरसाता-
वसुधा-रूप खिले अति व्यापक।

घिर-घिर गरजते, घर्षण करते-
तड़ित का करते है वे सृजन।
चमक रही हैं नभ में चपला-मानो
रंभा के सुंदर-शोभित दंत-कंचन।

शांत जलधि हिलोर ले रहा,
उर में प्रतिक्षित मृदुल प्रेम जगा।
सतह पर शीतल पवन बहलाती-
सिंधु-मन में न अब विराग रहा।

निष्ठुर समय बीत गया अब
सुखपल आया लिए सौगात।
हरी-हरी दूब से मही सजी है-
नाच रहे है तरुवर के डाल-पात।

नयी-नयी कोपल निकली-
पुंकेसर पुलकित अब दिखते।
समीर बह रही मंद-मंद..हर
फूल से भंवरे मकरंद हरते।

अति मनोहर छटा वसुधा की-
स्वर्ग से सुंदर मही-आंगन।
हटा, घटा को, शिथिल आषाढ़ ने
तैनात किया वयस्क सावन।

सावन मास है प्रेम का पावन दूत-
स्वयं रति करती यहाँ सोलह-श्रृंगार।
शिथिलाई अकुलाई तरुण-जवानी
सावन-फुहार को पा भरती हुंकार।

जीवन दौड़ता तीव्र-गति से
तितलियों को लगते है पंख।
मधुर मिलन की बेला का मेला
प्रेम-कुंभ में प्रणय का बजता है शंख।

थके-थके से वारिद दिख रहे, नभ में-
अब इनको भी तो घर जाना होगा।
बरस-बरस कर सावन बूढ़ा हो चला
सुस्त भादो को अब आना ही होगा।

खरीफ फसल अब पकने को है-
खेतों में पीली पड़ने लगी फसल।
रवि से हल्की ऊष्मा लेकर समीर
पका रही ज्वार, मक्का का तन।

नभ पर छिटपुट धवल-बादल
अब जा रहे है सब अपने देश।
क्वार की पहली तिथि जब आती-
लाती भूट्टों के सिर स्वर्ण केश।

आश्विन मास की रातें सुहानी
मीठी है और अति शीतल भी।
ओस पड़ती है, दूब पर मोती सी बूंदें-
अरुणोदय पर, छटा बढ़ाती वसुधा की।

कार्तिक आया, शरद ऋतु आई!
जीवों ने पाया अति मधुर जीवन।
अति सुहाना मौसम ये धरा पर..
खेतों में हुआ रबी फसल बीजन।

अगहन है आया, शरद वयस्क हो..
दे रही प्रकृति को प्यार दुलार।
पुलकित पौधे, सज्ज लता, वनस्पति
गेहूं में हुआ नव-ऊर्जा का संचार।

पौष मास दांत पीसता, संग लिए
धुँध··· कुछ भ्रमित सा दिखता।
रवि गति है मंद-मंद, नित कर्म से
आदित्य थका-थका सा लगता।

होता उदित पर धुँध में न जानें
कौनसा खेल वह खेलता है।
प्राणी जगत के नित दर्शन को
तरसें, न वह तपन अब भेजता है।

माघ मास अति आतातायी….
डसने को आतुर वह सृष्टि को।
कोहरा छाया है समूची मही पर-
कुछ न दिखे, क्या हुआ दृष्टि को?

अंत हुआ अब शरद कहर का!
अब कुमार वसंत है आनेवाला।
वृद्ध माघ शिथिल तन लेकर-
चिर-निद्रा में अब जानेवाला।

फाल्गुन मास अति निराला!
सरसों खिले धरा पर पीली-पीली।
अंबर है नीला, वसुधा है पीली!
फूलों की सुरत हूई लाल-नीली।

कुमार वसंत के ये दो माह निराले।
मानो स्वर्ग वसुधा पर आ उतरा।
सतरंगी पुष्पों के नील-चमन में-
भंवरों का दल नित गुंजन करता।

अति सुहाना और मनभावन है-
वसंत सभी ऋतुओं का ऋतुराज ।
इंद्रलोक से भी सुंदर जग दिखता
धरा ने पाया प्रभु से, यह ऋतु-प्रसाद।

टूटे सपने

आओ! चलो टूटे सपनों को जोड़े!
संकरे रस्तों को सुगम-पथ मोड़ें।
आशाओं के शस्त्र से जीवन में रस घोलें!
आओ! साहसी बन अथक-पथ नित दौड़ें।

धूप में तपते पग..न रुके!
छांव आने तक सतत चलें!
छाया है जरूरी यदि छाता चाहिए?
नभ को बना छाता नया..निरंतर चले।

नदी का बहाव चलो अब मोड़े!
दुर्गम गंतव्य तक निर्बाध दौड़े।
थकना नहीं..रे! पथिक ध्यान कर!
शूर है, पथ क्रूर चाहे! पहचान कर!
चल अनवरत जब तक सूरज ढले!
पा ले गंतव्य को..जहाँ ये क्षितिज मिले।

घोर अमावस की कालिमा में!
तारों से लेकर रे! पथिक रोशनी!
शून्य या मौन लिए हुंकार भरती-
निरीह लगती रात जो विरागनी।
न डरो! तुम इससे हे! पथिक!
ऊषा निकट है! धैर्य रख बढ़े चलो!
आशा को बना सहारा, बढ़े चलो!

राह है कठिन लड़ना पड़ेगा!
बाधाएँ राह की कांटा बने!
पाने की चाह, अटूट यदि तेरी-
फिर ठहरना क्यूँ मर्यादा बने।
सिंह से दौड़ में मृग कितना गतिमान?
शिकार होता मृग क्यू? ये भेद जान!
पथ पर जो पथिक पीछे देख कर चले!
साहस टूटता है उनका, जो एक-एक पग गिने।

हक यहाँ मिलता नहीं, तू-
स्वयं का न्यायधीश बन!
जीत निश्चित ही पाएगा!
न बाधा बने, नदी पहाड़ या वन।
स्वयं की सड़क बना सरपट दौड़े।
पाए गंतव्य शीघ्र लक्ष्य कभी न छोड़ें।

साहस लगन सहनशीलता
जिसके तन बसती हो।
लक्ष्य पर जिसकी नजर
सदैव ही वहाँ रहती हो।
बनो आज के अर्जुन तीर ऐसा छोड़े।
जीवन की स्पर्धा में मछली की आँख फोड़ें।

वो ही पाएँगे इस जग में-
जीवन का अभिलक्षित फल!
कर परिश्रम आज लिखेंगे
कर्मवीर अपना जो कल।
आओ ! कस लो कमर, निर्बाध मार्ग अब चलें।
साहस भरी यात्रा में, अपना इतिहास लिख चलें।

आलंब

जब हवाएँ विपरीत बहे!
वक्त नयी कहानी कहे!
अपने ही जब पराये लगे!
जिंदगी वीरानी लगने लगे।
उस पल मुझे पुकार लेना तुम!
कुछ तो करूंगा जान लेना तुम!

भौर भौर सी ना लगे!
पुष्प नीरस हो खिलें!
पक्षी कलरव कम करे!
ओस दूब पर कम गिरे!
यह पल कठिन है जान लो!
यहां कुछ तो घटा है मान लो!

जब मन की कोई बात न कहे,
जब आंखों से आँसू चुपचाप बहे,
जब मुस्कानों पर लबों का परदा हो,
और मन के भीतर कोई डर ठहरा हो...
उस पल बस मेरी ओर निहार लेना तुम!
मैं मौन में भी स्वर बनूंगा, जान लेना तुम!

अनगिन बाधाएँ आड़े आएं!
जब सब पीछे हट जाएं,
तेरी सहायता को वो न आए!
अति असहाय अपने को पाएं!

बस इक नजर मेरी ओर करना तुम!
सब दुख दूर करूंगा, अब जान लेना तुम।

चांद की अठखेलिया

क्या कभी सोचा!
चांद, नित एक नया रूप धरता है क्यू?
क्या कभी सोचा?
वह नित नयी कलाएँ दिखलाता क्यू?
कैसे ज्वार उठे समंदर में?
बीच वारिद के भाटा आता है क्यू?
क्यू जलधि हो मतवाला?
चांद को पास बुलाता है क्यू?

हुआ अलग वह अपनी माँ से
जलधि को चंद्र-स्थान मिला।
आता पूर्णिमा मात-मिलन को
किंतु माता से न दुलार मिला।

आता ज्वार, लाता ऊभार-
भाटा तली को देता निखार।
जलधि न तनिक विचलित होता-
पाता माँ से असीम दुलार।

सतत प्रयत्न करता हैं चांद···
किंतु जलधि रहता है अति-शांत।
मातृ-प्रेम अटूट है, दोनो का देखो!
एक के हिस्से ममता, दूजों विवशता।
एक ने पाया परम सुख जीवन का-
दूसरा जिए दुख की कठिन अवस्था।

कई कल्पो से हूँ मैं वंचित,
माँ का नही मिला दुलार?
मां ने पाया है नव-ललना,
नाम है जिसका पारावार।

छूट गया था माँ के आँचल से,
जब प्रलय मही पर आई थी।
उथल-पुथल थी घनी व्योम में,
एक महा-उल्का टकराई थी।

लिपटा हुआ था माँ के तन से,
डर मैं था मैं अति घना।
अति वेग से गिरा उल्का-पिण्ड धरा पर,
मैं माँ से गया छिना।

हुआ अलग तो माँ विलखायी,
रो पड़ा मैं देख घना तिमिर।
भटकता फिरुँ दिशाहीन पथ पर,
वर्षों खाक में सोया था शरीर।

उजले तन पर धूल जमी है,
वृत्त-पथ पर अब भटकता हूँ।
न मिले, कहीं भी चिह्न मात का-
नयनों से नीर-नदी बहाता हूँ।

एक युग बीता, आज रवि ने
अपना मुखड़ा फिर दिखलाया।
मिली किरणें, स्वयं को देखा,
स्वर्ण-धूल से था मैं नहाया।

सुध-बुध खोकर खोजने माँ को,
निकला मैं जैसे विचलित बाला।
पाने को अपनी माँ की गोद,
अनंत व्योम में डेरा डाला।

दी दिखलाई माँ मुझको, पर वह
तीस सहस्त्र योजन है दूर।
चला मैं मिलने अपनी माता से,
लक्ष्य है थोड़ा कठिन जरूर।

न समझ सका यह कैसा बंधन,
गोल-गोल घुमा रहा मुझको।
भरसक प्रयत्न करूँ, चलूँ उस पथ,
फिर भी मिले पराजय मुझको।

कौन-सा बल जो खींच रहा है,
एक नियत कक्षा में घूम रहा।
मिलन माँ से कैसे होगा,
मानस में प्रश्न कटोच रहा।

कभी रोता, कभी चीखता,
विजन गगन में न सुनता कोई।
प्रयत्न यही — माँ को पुकारूँ,
पर लगता है, माँ थककर सोई।

नहीं वह सुनती पुकार पुत्र की,
मन मेरा अब अति विह्वल है।
दिया दिखाई! मात-गात से
लिपटा तन जिसका उज्ज्वल है।

भूल गई है वह मुझको,
मेरा विस्मरण अब हो आया।
मिला नया लाल सागर अब माँ को,
मैं नहीं उसे याद आया।

मन कुंठा में सोच रहा है,
किस पथ मैं जाऊँ अब।
प्रयत्न कर लिए मिलने को माँ से,
समय पर सब छोड़ूँ अब।

रहूँ सुखी अब देख दूर से
अपनी माँ की सुंदर छवि।
करूँ मैं दिन में बात रवि से,
रात में चमकाऊँ मात-मही।

रहूँ चमकाता जब तक साँसें,
जब तक यह जीवित आकाश-गंगा।
अटूट है मेरी मातृ-भक्ति,
माँ की सेवारत मैं पुत्र चंदा।

हुआ वयस्क अब शशि सलोना,
पाया उसने अति मनमोहक रूप।
बाल-अवस्था बीत चुकी अब,
शशांक बना कामदेव स्वरूप।

की घोर तपस्या, शिव-शीश-
शोभित, जगमग किया दिगदिगंत।
शीतल-तन, है निर्मल-आचरण
रजनीश स्वभाव से परम-संत।

हुए सम्मिलित देव-सभा में,
बने मृत्यु-लोक में परम पूज्य।
बने रात के सजग प्रहरी,
शशि रजनी में स्वर्ण-तुल्य।

मिला स्थान नवग्रहों में उसको,
चाँद का निखरा रंग प्रभूत।
मिला इंद्र का साथ यहाँ देखो,
स्वभाव में आया परिवर्तन अकूत।

जैसी उठ-बैठ, कृत्य हो वैसे,
जगत ने कहा, नहीं यह झूठ।
देव से मिलने नित वह जाता,
अपनी करनी चाँद गया है भूल।

उपजा चमन में पुष्प अति सुंदर,
आज भूल गया खिलना वह फूल।
इंद्र सदा मय में डूबा रहता,
स्वर्ग का राजा, मय-वशीभूत।

सज्जन आचरण सदैव झलकता,
जैसे कीचड़ में खिलता है नलिन।
मित्रता में आचरण धोखा खाता,
दुर्जन का संग उसे करता मलिन।

चोरी से मिलना, मदिरा पीना,
नित निशा में घूमे इंद्र-लोक।
कर्म से जी चुराता शशि सलोना,
कुसंग के संग लगा मद-रोग।

बैठ शाम को वो चर्चा करते,
कौन धरा पर अति सुंदर नार।
मय का प्याला घट में उतरे,
लाता निर्मल मन में दीन विचार।

यहीं से शुरू हुआ खेल निराला,
सोम ने जब पिया सोम का घूंट।
"देव सुनो, तुम्हारे स्वर्ग से भी सुंदर,
एक नार धरा पर, लिए रूप अद्भुत।"

रति लजाए, रूप है ऐसा,
हूर, मेनका, रंभा, ऊर्वशी, तिलोत्तमा भरे पानी।
"पा लो छल से, हे इंद्रदेव, उसको —
ऋषि गौतम-भार्या है, अभिमानी।"

बात हृदय में इंद्र के बस गई,
अहिल्या पाने की युक्ति ठानी।
साथ चाहिए रजनीश तुम्हारा,
गौतम ऋषि की करो निगरानी।

रूप शशि ने भरा कुक्कुट-पक्षी का,
दिया बाग ऋषि की कुटिया पर।
उठे ऋषि कमंडल पकड़े,
स्नान हेतु चले संकरी पगडंडी पर।

इंद्र था छलिया, रख गौतम स्वरूप,
पहुँचा समीप ऋषि-पत्नी अहिल्या के।
करने लगे प्रणय स्वर्गाधिकारी,
अहिल्या भी रति-गत हुई प्रियवर से।

नदी ने पूछा, “हे मुनिवर, सुनो!
आज स्नान की इतनी जल्दी क्यों?
हिरणियाँ नभ में दिख रही हैं,
ध्रुव अस्त नहीं, शीघ्रता क्यों?”

सोए हुए सब खग-पक्षी भी,
व्योम सोया सुखकर नींद।
धरा गति मंद हो चली, मुनिवर,
जलधि भी सोया, मैं भी उनींद।

भ्रम हुआ है, मुनिवर, सुन लो,
अभी भोर नहीं होने वाली।
जाओ, कुछ घटित हुआ है,
करो अपने परिवार की रखवाली।

मुनि ने जांचा नभ और क्षितिज,
हुआ गलती का उन्हें भान।
कैसे भाँप न पाया मायाजाल को,
पल में किया अनहोनी अनुमान।

क्रोध में दौड़े कुटिया की ओर,
मुनि के अंतर में था रौद्र रूप।
दिया शाप पहरेदार रजनीश को,
शापित चाँद ने पाया कुरूप।

इंद्र को शाप दिया कुछ ऐसा,
छिपना पड़ा कमल-पंखुड़ियों बीच।
की स्तुति वर्षों तक ब्रह्मदेव की,
तब पाया अपना खोया रूप।

उठ-बैठ हमारी अच्छी हो यदि,
विपदा कोसों दूर रहें।
सलाह सज्जन की सदा मानिए,
दुर्जन की खीर, शरीर हरे।

मैं खोज लेता हूँ।

मैं वो हूँ···जो दुख में भी सुख खोज लेता हूँ।
दर्द-भरी जिंदगी में खुशी के पल ढूंढ लेता हूँ।
मिला नही प्यार अपनों से मुझे..
पर अपने हिस्से का प्यार छिन लेता हूँ।
लोग कहते है देवता मुझे
पर राक्षसों के घर भी बैठ लेता हूँ।
फुरसत नहीं है जीवन में मेरे,
पर फिर अपने लिए समय खोज लेता हूँ।
पीना था दूध मुझे उस सांझ,
पर ठंड इतनी कि रम का ढक्कन खोल लेता हूँ।
मित्र आओ बैठों साथ मेरे,
दिल के सब दरवाजे खोल लेता हूँ।
रटता नही मैं ईश्वर को, किंतु बीमार होने पर
हे! राम! हे! कृष्ण! बोल लेता हूँ।

कौन!

उर में बात साल रही मेरे
 मुझे बताओ क्यू हो मौन
इस रमणीक धरा सुंदरी पर
 हमको यहां लाया कौन?
क्या मकसद है नर को लाकर-
 क्यू दिया इसको इतना ज्ञान?
क्यू बरसायी ममता इस पर-
 क्यू बनाया इसे धरती का डॉन?
आज बताना होगा ईश्वर-
 हमसे इतना प्रेम हैं क्यों?
क्यू बरसते बादल मतवाले-
 कल-कल बहती नदियाँ है!
क्यू कानन मे पुष्प है खिलते-
 मस्त झूलती तरु पर कलियॉं है!
सुंदर लतिकाओ पर कैसे-
 कलरव करते पक्षीगण है!
दिन-रात का आना जाना-
 यह कौनसा प्रयोजन है!
आज बताना होगा हे! ईश्वर-
 ये नित अलख जगाता कौन!
हमें बताओ हे!मेरे ईश्वर!
 अब भी इतने क्यू हो मौन!

सुबह दोपहरी शाम बनायी-
जब मानव मे शिथिलता आई!
पौरुष थका-थका सा लगता-
संध्या पकड़ रजनी को ले आई!
खूब बरसाये दूध के नाले-
पान कराये मकरंद के प्याले
मय को देकर अहम जगाया-
यह प्रश्न कुछ समझ न आया!
भरा अहंकार क्यू कोमल ह्रदय में-
क्यू हर्षित हो मेरी पराजय मे!
आज रहस्य खोलना होगा-
हे प्रभु मार्गदर्शन करना होगा!
क्या कारण अवतरित तेरी संतान-
हमे बताओ क्यू हो मौन!

रामनाम

बहुत हुआ आराम
भज ले श्रीहरि का नाम
कि दिन तेरे फिर जाएंगे॥ दिन॥
माटी की तू काया ढोवे
हल्की चोट पर तू तो रोवे
खाट छोड पलंग पर सोवे
फिर भी नींद ना आवे
कुछ ऐसा कर इंतजाम-
कष्ट सारे कट जाएंगे॥ ॥भज ले
कुटिया छोड महल बनाया
अट्टारी बैठ खूब इतराया
फिर भी चैन न तूने पाया
सुख ढूंढा दुख ही पाया
जीवन मिथ्या लगे तमाम॥
रट राम का नाम सब झंझट कट जाएँगे॥भज ले
मिट्टी का पुतला है तू रे
किस घमंड में सबको घूरे
चार दिनो की ये माया रे
हाथ तेरे जो कुछ आया रे
छूट जाए यही तमाम
साथ नही ये जाऐंगे॥ भज ले
भज ना, नही हरि को सीखा

मोहमाया में कुछ नही दीखा
झूठी शान लिए जग लूटा
तू ईश्वर से क्यूंकर रूठा
चल उठकर कर प्रणाम
क्षमा तुझे दे देंगे॥भज ले

हट की हठ

मन ने मेरे आज है ठानी
बनकर के अभिमानी!
हट की हठ ..कि छत पर हट हो!
ये हठ है अति पुरानी॥

बने बॉस की या काठ की!
हट होगी ये नये ठाठ की।
मैंने बनाया खुद ही नक्शा!
हट में फिट हो सुंदर बक्सा।
चार कोनों के बीच मेज सजी हो!
उसपर सुंदर स्कॉच रखी हो।
सुंदर-सुंदर प्यालों मे हाला!
संग मित्रों के साखी ने घाला!
बनकर के सम्मानी।
मूछ मैने फिर तानी॥ये हठ है अति पुरानी

ऊपर छत पी वी सी वाली!
साइड में लगी स्टील की जाली।
गोल-२ लौह खंभो के ऊपर !
छत तन गयी फाईबर वाली।
भर सिलिकॉन सील करे सब छिद्र!
न डर ..गिरे एक बूंद भी पानी।
मै कितना हूं ज्ञानी॥ ये हठ है अति पुरानी

रोज शाम को श्याम मिलेंगे!
पुराने मित्र अब गले लगेंगे।
बीती बाते जमकर करेंगे!
मन को ये पल अति हर्षित होंगे।
बातो-बातों मे फिर रात ढलेगी!
देखो हम सबकी उम्र बढेगी।
फिर लौट आई जवानी।
देखो!कभी न खत्म कहानी।।ये हठ है अति पुरानी

नोटः- यहाँ हट-Hut से अभिप्राय है

क्षणिकाएँ

क्षितिज

दृष्टि का हूँ अंतिम बिंदु…
मैं क्षितिज एक लक्ष्मण रेखा।
जीवन मेड़ हूँ दुनिया की-
नभ-धरा की मिलन-रेखा

धैर्य

कभी परवा…तो कभी पछुवा!
रे नर! धीरज राखियो..
खरगोश से दौड़ में—
सदैव जीतता कछुवा।

मन में राम

हैं राम यहीं..हैं कृष्ण यहीं..
फिर क्यू वहाँ जाऊं…क्या प्रश्न सहीं?
सच्चे हो यदि कर्म….तो स्वर्ग सही!
गंदे कृत्यों पर नर्क…कहे! कर्मों की बही।

चौराहा

हूँ चौकीदार जगत का!
रखता सब की खैर खबर!
हर मौसम में रहता चौकस
मेरी सब पर पैनी नजर!

रवि-वंदन

नमन तुम्हें हे! दिनकर!
तुम हो जग के पालनहार!
अपनी रश्मियां भेज धरा पर
करते नित ऊर्जा संचार!
तेरे कारण ही अंकुरित-
बीज जो हम बोते हैं!
दिन-रात के कारक हो-
प्रणाम तुम्हें! जगपालक!
हम नतमस्तक होते है।

सुप्रभातम

मंद वेग से चलता दिनकर
शिशिर ऋतु में अलसाया सा!
सिकुड़ी धरती, ठिठुरे प्राणी-
साहस तनिक घबराया सा!
प्रयत्न करो हे! मानव उठकर
कर्मवीर तुम हो जग के!
कर्मफल से सुलगा लो अंगीठी
कह रही मैं ऊषा! कब से!

शुभ-सवेरा

हरी-२ घास पर जलकण
जगमगा रहें हैं मोती से!
ऊषा ने नम आँखें खोली,
हूई अलग अब सखी रजनी से!
एक का आना, दूजे का जाना
नियति ने बनायी हैं ये रीत!
उठो! हे! मानव चलो कार्य पर
पूर्ण करो तुम अपनी जीत!

सुहानी भोर

प्राणदायिनी, सुखदायिनी
भोर सुहानी आयी हैं!
जगो रे! प्राणी! इस बेला में
कोई तुम्हें जगाने आयी हैं!
उठो ! क्यू सोये हो! देखो
सब जग जगता है!
कर्महीन संघर्षहीन जो
प्रारब्ध उसे नही चुनता हैं!

यदि पूछ लिया होता

हम सबका वह रखवाला
उसके खेल अजब निराले!
नीचे भेजते यदि पूछा होता
तूने मुझको हे ऊपरवाले!
एक अलग शहर सपनों का चुनता
निर्झर झील कुसुम-वन चुनता
खग-मृग उपवन के गहने होते
डाल-डाल पर पक्षीगण कलरव करते
बॉस -पत्तो को एकत्रित करता
रचित सुंदर नीड़ पीड़ मेरी हरता
हरी-हरी घास बिछौना होता
कदंब का वृक्ष समक्ष सलोना होता
पर किस्मत में लिखे है लाले!
क्या गलती हूई ऊपरवाले!
मुझको भेजा तरूण मरुभूमि में
जल पाकर भी उष्ण अधर हैं
इस धरा पर रेत-नदी बहती
दिन में लपट, रात शीतलता देती
निर्जन है पर पावन है
धरा नही ये धरती माॅं हैं
ऊंचे नीचे चतुर्दिक फैले
सुंदर भीमकाय रेत के टीले
सब ईश्वरीय माया यह
कहीं शहर तो कहीं कबीले।

चुभते बोल

मन की मानी, मान की हानि!
रे! हठी ह्रदय, यह क्या ठानी!!
खुल गयी देखो प्रेम की पोल!
दुनिया कहती, चुभते बोल!!॥
कल हम जिनको अपना कहते!
पल न लगी हमें पराया कहते!
जिस पथ जाते, उस पथ दौड़े जाते
अपनी हानि, उन्हें लाभ दे जाते
सब था ये मोह-माया-झोल
सच को झूठ के तराजू दिया है तौल॥॥
मेरी बाधा हरि ने हर ली
प्रीत के बदले भक्ति चुन ली
राम मिलेंगे जिद ये कर ली
बुद्धि पहले किसने हर ली
रटती यदि मैं राम का बोल
मेरा जीवन रहता अनमोल॥॥
जा री प्रीत मैं तेरी बैरी
हम दोनों में जिद ये ठहरी
किसका पथ चले मोक्ष के रथ पर
कौन विजयी हो भवसागर मथकर
किसकी नैया डावाँडोल
कौन पाये भक्ति का मोल
किसके पल्ले चुभते बोल!! ॥

फूल

डाली से टूटा फूल-
आ बैठा गुलदान में!
उडेल दो बूंद जल-
मिला एक पल जीवनदान में!
सीखा मैंने सबको -
सुगंधित करना
हाय! नियति से पाया
मैने ऐसा मरना!
पर सौभाग्य मेरा इतना
बसा मानव के मन मे!
हे! ईश्वर कामना यही
फिर खिलू इसी चमन मे!

प्रतिशोध

अनंतकाल की यही कहावत
मत पालो प्रतिशोध को!
इसने महाभारत कराई
तुमको यदि बोध हो!
प्रतिशोध-वश रावण हारे
वे भी प्रतिशोध ने मारे
दुर्योधन ने भाई गवायें
तब पर भी तू समझ न पायें
कर लो कितना बैर किसी से
मिलता क्या, हाथ मलो नीधि से
इसने अश्वस्थामा को जीता
रक्त मस्तक से निशदिन टपकता
मत पालो इस दानव को मानव
हड़प ये ले धनवैभव व साहस
प्रेम दवाई इसपर छिड़को
दूर भगाओ अंदर की चिड़ को
प्रेम-भाव से अरि को जीतो
न फिर मान का कभी अहित हो

बारिश की बूंद

चली आसमान से यात्रा पर
एक बूंद यौवन में मतवाली।
थी कला में अति प्रवीण वह-
गिरी एक आंगन किस्मतवाली।

हरा-भरा आंगन पाया उसने
गुलाब का गमला घर बना।
पोषित किया गुलाब को उसने
आंगन सुगंधित अति घना।

पूरा हुआ पिया मिलन अब
नहीं कोई अब अरमान रहा।
मिटकर भांप बनूंगी..ऊड़ू गगन में
धरा पर नित आना-जाना रहा।

पता नहीं..फिर किस आंगन में-
गिरना··· मेरा सौभाग्य बने।
पता नहीं..किसी मरु-भूमि पर
मेरा नामोनिशान मिटे।

गिरू नीड़ में किसी पक्षी के
चूजों की प्यास मिटाऊं मैं!
गिरू पपीहा के घट में जाकर
सालों का व्रत तुड़ाऊं मैं!

रहे निरंतर मेरी यही कामना!
नदियों का वेग बढ़े मेरे कारण!
जीवन निर्बाध चले सरल पथ पर
सावन मे खुशहाल सर्वत्र कानन।

पर कर्तव्य यही···मैं शीतलता-
बांटू..प्यासे की प्यास बुझाऊँ।
कर्म पर विश्वास अटूट हैं-
जहां गिरू नवजीवन लाऊँ।

गंगा-घाट

अस्थियां बहाने गंगा-तट
पहुंचा वृद्ध पति लाचार!
पत्नी गयी साथ छोड़ पति का-
मन ही मन करता वह विलाप।

जीवन-साथी खोना दुखकर कितना?
जो खोए यह वही जानें ।
जीवन-मृत्यु अटल सत्य धरा पर
आत्मा बदले वस्त्र पुराने।

इस आधुनिक युग में मैंने
जो देखा वही बतलाता हूँ।
दो वृद्ध जनों की विरह कहानी
मित्रों!आज तुम्हें सुनवाता हूँ।

गंगा घाट बैठ रो रहा,
एक बूढ़ा पति उदास।
बच्चे पढ़-लिख सफल किए-
पर एक नही था पास!

जीवन तिल-२ वो मरे!
खड़ा किया था जिनको!
आज पास मेरे वो हैं नही-
पैदा किया था जिनको।

गलती अति भारी की थी-
सोच रहा वह मन में!
भेज विदेश दोनो बेटों को
सूनापन लाया जीवन में।

संस्कार बदल गये देश पराए
हम उनके अब नही अपने!
जपते भजन कीर्तन जब छोटे थे
अब लेते पाश्चात्य संस्कृति के सपने।

बोझिल आँखें राह निहारे-
शायद बुद्धि बदले!
ममता उमड़ पड़े ह्रदय में
शीघ्र फ्लाईट वो पकड़े!

दिवस बीत गये दस परंतु
अब और इंतजार नही बस में!
चला अस्थि-कलश हाथ में
भरपूर बल से उसे पकड़े!

उम्र अस्सी थी, पर साहस-
अब भी नवयुवक सा!
पहुंचा गंगा-तट जहाँ
एक और बुढ़ा बैठा था!

कर में कलश पर कंपित शरीर से
वह भी सीढ़ियां उतरता!
था अकेला, डग भरता
पर तनिक नहीं घबराता!

कर विसर्जन पत्नी-अस्थियां
करवंद प्रार्थना वह करता!
मिलो बैकुंठ में मुझको प्रिये!
प्रभु से ऐसी विनती करता!

पलट गंगा से हो विमुख वह
मुझसे जब टकराया!
कुतूहल से पूछा मैंने
क्या कोई साथ नही हैं आया!

आंसू थे आंखों में उसकी
बोला सीढ़ियां चढ़वा दोगे!
तुम भी अकेले कलश हाथ में
क्या तुम्हारे न बच्चे होंगे!

चलो कर लो विसर्जन बाद
मुझे सीढ़ियां चढ़ा देना!
मन को कर शांत प्रभु से
विनती तुम कर लेना!

बैठ शिला पर फिर उसने
अपना आत्म-वृतांत बताया!
अनाथाश्रम दिया छोड़ हमें
बच्चों ने, जिनको था खूब पढ़ाया!

दोनो बेटे गये विदेश, एक नयी
रीत वहाँ से लाए!
बोले मम्मा-पापा सुन लो
अब तुम वृद्ध अति हो आए!

सबसे विकसित देश अमेरिका
जब माँ-बाप वृद्ध हो जाते!
उनके बच्चे अपने वृद्ध जनों को
सेल्टर-होम छोड़ आते!

जीवन आधुनिक व्यस्त घना हैं
हम देखभाल नहीं कर सकते!
हमने व्यवस्था कर दी हैं पूरी
सेल्टर-होम में आप सुखी रह सकते।

दश वर्ष बीत गये भाई मेरे
पर वो अब तक नहीं आए!
उनकी यादों में हम बूढ़ों के
नयन पत्थर के हो आए!

चली गयी बिन पोती-पोते के
मन में आशा वह लेकर!
प्राण चले गये, चिंता में उसके
जीवन बीता रो-रोकर!

अब तुम भी अपनी कह दो-
मैंने अपनी कह दी!
तुम भी अकेले मेरी तरह ही
क्या आज पत्नी-अस्थियां तज दी?

सुनकर समकक्ष की बातें
मैं फूट-फूट कर रोया!
अपनी कहानी पर-मुख सुन
भाव-विह्वल हो आया!

वाह! री! दुनिया तू कितनी निर्दयी
आज भान हुआ हैं मुझको!
अपने हुए पराये कितने
बोझ लगे माँ-बाप जिनको!

सीख मिली बस यही एक
कि परिवार रखो पास सदैव!
बच्चे पढ़ाओ खूब, पर याद रहें
विदेश नहीं भेजना तुम उन्हें!

भागमभाग जिंदगी

भागम-भाग में फंसी जिंदगी
न तुझको मेरी अब फिक्र रही।
एक नीड़ के दो प्राणी थे हम-
महल में रहकर भी उदास अति।

मेरे भाग्य में लिखा है भगना..
तेरा भक्ति में मन बसना।
मैं भी चाहूं संग तेरे रह-
करूँ तपस्या या विपस्यना।

पर यह क्या? मन नहीं लगता
सोचूँ और तनिक धन-संचय कर लू।
खड़ा कर्म-क्षेत्र में, डटकर मैं अब-
चाहूँ ..सारा जग अपना कर लू।

भूल गया मैं गीता-ज्ञान को
नहीं भान मुझे हो पाया।
धन-दौलत ठाठ-बाट पर
मैंने जीवन व्यर्थ गवाया।

चलो भटको को राह दिखाने-
हम-तुम उनके पथ-द्दष्टा बनें।
बचते फलदार वृक्ष झुके जो रहते है..
गिरते धड़ाम जो तुफान में खड़े तने।

भूल

इस धरती पर, किसी भूल सी!
किसी उपवन मे, खिली फूल सी!
प्रिय मिलन को अति व्याकुल सी।
क्यूं उडती हो बन धूल सी!
मन के बीच खिली क्यारी हो!
अपने प्रिय की तुम प्यारी हो!
प्रणय स्वीकार देख अभी हो!
मै प्रफुल्लित यदि हां अभी हो।
कोमल बदन सदन मे रह-रहकर।
कुछ कुम्हलाया छॉव मे रहकर!
हुआ उग्र मन उत्तेजित होकर!
मिला रति से मदन यह कहकर!
प्रेम का रस बरसने दो अब!
प्यार का रथ सरकने दे अब!
भूल कर बैठी , प्रियतम पर ऐंठी
कसती तंज, पर मन मलंग
सावन की फुहार, लायी उमंग
चल पडी प्रिय से महामिलन को
सब दुखडो के करने उन्मूलन को

सुप्रभातम

अनुराग अति हैं धरा तुम्हीं से-
भोर वंदन को व्याकुल हूँ!
बिखरा देता धूप सुनहली
प्रीत पाने को आकुल हूँ!
तुम स्नेहिल स्पर्श पाकर-
तनिक संकुचित हो शर्माती!
चलता तीव्र-वेग मैं प्रिये!
तुम श्रृंगार कर सज जाती!
विकल हो चला मैं दूपहरी-
देता हूँ अपना परिचय!
जग को पालित करने हेतु
करता मैं भी पूर्ण निश्चय!
पाता मैं भी परमानंद जब
मानव करता अर्पण जल!
करता वह नमन सहृदय से-
हो जाता मैं भी भाव-विह्वल!

प्रातः बेला
समेट बिछौना अंधकार का रजनी-
पौ फटते ही चिर-निद्रा में लीन हुई !
ऊषा वस्त्र सुनहले पहन, धरा पर
नव-वधु सी उदित हुई !
अति मनोहर दृश्य धरा का-
जो देखे मन हर्षित होता!
पा ले अति मनोरम पल हैं!
रे! मानव! उठ!तू इतना क्यू सोता!

बीती रजनी..आयी ऊषा!
वसुधा लायी..प्राण मंजूषा!
खग-विहग पुलकित हैं सारे!
फूल-वनस्पति हर्षित है सारे!
रवि-रश्मियां ऊर्जा देकर!
ओस-कोष में अपने लेकर!
अति रमणीय सुबह की बेला!
रोज ही लगता यह प्रकृति मेला!

कितना सुहाना दृश्य भोर का-
उपवन में नृत्य देख मोर का!
कलरव करते पक्षी पेड़ों पर-
चमकती ओस की बूंद मेड़ों पर!
अति मनभावन पावन यह बेला!
मानव! जग देखो ये दृश्य अलबेला!
जो जागे-वही पाता इसको!
सुप्रभात! रवि नित करे धरा को

अरूण उदित नव किरणों से
प्रकाशित करे, वसुंधरा को!
कल-२ करती जलधारा बहती
पाने अपने सागर को!
पाना सबका लक्ष्य सर्वदा
ये जीवन की है रीत!
उठ रे मानव कमर कस ले तु
मत आलस से कर तू प्रीत!

समेट बिछौना अंधकार का रजनी-
पौ फटते ही चिर-निद्रा में लीन हुई !
ऊषा वस्त्र सुनहले पहन, धरा पर
नव-वधु सी उदित हुई !
अति मनोहर दृश्य धरा का-
जो देखे मन हर्षित होता!
पा ले अति मनोरम पल हैं!
रे! मानव! उठ!तू इतना क्यू सोता!

सुमन खिलें हैं, महक उठा जग!
मन मेरा अति खुशहाल है!
समय बीत रहा तीव्र वेग से
पूरा होने को यह साल हैं!
करूं प्रार्थना हे! जग के स्वामी
हमको निरामय सुख देना!
प्रदान कर, सुख-वैभव सबको
सपने-सबके पूरे होने देना!

हवा में आज कुछ धुएँ की महक ज्यादा हैं!
दम-घोंटू जहर से मानव मिटने पर आमादा हैं!
आज की सुबह..सुबह नही लगती!
रवि-रश्मियां बूझी-२ सी हैं लगती!
ओस की बूंद धूल के कणों भरी हैं!
घास का रंग पीला..पत्तियां न हरी-भरी हैं!
फिर भी धरा को थोड़ा विश्वास हैं!
जागेगा मानव जो सोया निश्वास हैं!
नमन करती हूँ मानव तुझको, उल्टी रीत हैं!
कलियुग चरम पर, पर मुझे तुझसे प्रीत हैं।

मै जागू तुम सो जाओ

अलसित जगत परिश्रम करके,
ढूंढे संध्या की गोदी!
गहरी निद्रा में खोकर प्राणी
पाता नवजीवन ज्योति!
पवन सरसरी करती तन पर
शीतलता दे जाती!
रजनी मूक कहानी कहकर
चिर निंद्रा में ले जाती!
टिमटिमाते जूगनू देखो
अविरत तम से लडते!
बीते विभावरी किस पल
यही आस में रहते!
खग लेते विश्राम विटप पर
चतुष्पद खडे-खड़े सो जाते!
गगन सांस गहरी लेकर
पृथ्वी पर प्यार बरसाता!
चॉंद कलॉए दिखलाकर
रजनी पति कहलाता!!
ऊल्लू बिल्ली गृहमोचिका
बने जगत के रखवाले!
पवन झूंझलाती धरा सुुंदरी को
जो पान किए चिर निंद्रा के हाले।

भवसागर सोता, हिमालय जगता
शांत रहे सब कानन!
पौ फटी, निंद्रा हटी, जगत ने
पकडा अरूण रश्मि का दामन।
नित नयी ऊर्जा मै पांऊ!
प्रिय तुम जागो मै सो जाऊं!
जागती जिंदगी यदि लगे उबाऊ!
चलो सपनो मे तुम्हें सैर कराऊं!
ईंद्र के महल में मै ले जाऊँगी!
हारसिंगारवन को महकाऊँगी!
कुछ फूल ऊधर से मै चुराऊंगी!
जाग प्रभु को सुबह चढाऊंगी!
जीवन अब न रहे उबकाऊं!
तुम भी जागो…….मैं भी जागूं, !
जीवन-रस अब तुम संग पाऊं।

मन का अंधियारा

मन के अंधियारे का
सूरज बनेगा कौन अब?
राह में मोती बरस रहे हैं,
उन्हें चुनेगा कौन अब?

हाथ-पाँव बंधे हैं मेरे–
पग बढ़े वहाँ तक कैसे अब?
रक्तचाप मंद हो चला है,
जीभ लड़खड़ाए, बंद हैं लब!

नेत्र खुले पर दृष्टि नहीं है,
सपनों में भी भ्रमित हूँ अब।
चतुर्दिक धुंध पसरी, किधर चलूँ–
मस्तिष्क मेरा शिथिल है अब।

मन की गांठें कस गई हैं,
खुलेंगी कैसे, जाने कब!
बनता दीपक मेरे पथ का-
वो भी बुझा पड़ा है अब।

ना कोई स्वर, ना कोई सहारा,
अपना ही साया डराए अब।
जीवन की इस विषम घड़ी में,
साहस जगाए कौन अब?

दूर-दूर तक मैंने खोजा
मेरा बोझा उठाए कौन अब?
मित्र न कोई बना सहारा!
मेरी नैया तेरे हवाले मेरे रब।